

स्याही समंदर पार : कैसे टैगोर और येट्स ने एक-दूसरे को गढ़ा

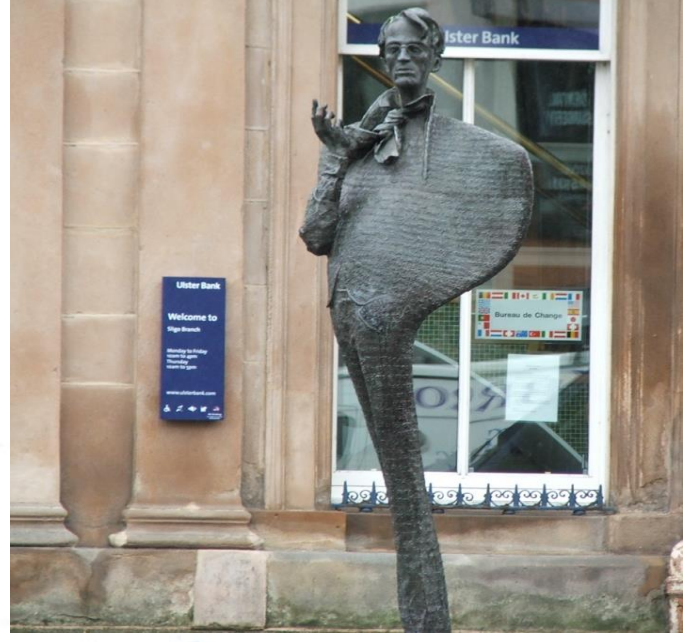
बहुत कम ऐसा होता है कि एक यात्रा संस्मरण दो देशों के पुरातन संबंधों की दास्तान बन जाये पर मेरी आयरलैंड के उत्तर में बसे स्लाइगो शहर की यात्रा के दौरान कुछ ऐसा ही हुआ। कोविड काल में जब हवाई यात्रा बंद हुई तो देश के भीतर ही पर्यटन की संभावनाएँ तलाशी जाने लगीं। इसी उपक्रम में मेरा स्लाइगो जाना हुआ जो आयरलैंड का एक बेहद सुंदर पर्यटन स्थल है। यह अटलांटिक सागर से मुहाने पर स्थित एक पोर्ट शहर है जहां अकूत प्राकृतिक सुंदरता हर ओर फैली हुई है। स्लाइगो आयरिश भाषा के शब्द का अपभ्रंश है जिसका अर्थ होता है 'सीपियों का शहर' ऐसा इसलिए क्योंकि प्राचीन समय में इस क्षेत्र में सीपियों को मुद्रा की तरह प्रयोग किया जाता था।

स्लाइगो एक बहुत पुराना शहर है जिसके आसपास तमाम पुरातत्व अवशेष मिले हैं। इनमें से कुछ तो पाषाण काल के हैं। आज के स्लाइगो में बेनबुलबेन की ऊँचाई से लेकर ऊबड़-खाबड़ समुद्र तट तक, यहाँ हर ओर एक मनोरम प्राकृतिक दृश्य दिखता है। यहाँ आप सुबह से लेकर सूर्यास्त तक, मदमस्त अटलांटिक महासागर, दूर-दूर तक फैले हरे-भरे मैदान, बिल्कुल साफ पानी वाली नदियों और घने जंगलों में घूम-घूम कर शरीर थक जाएगा पर आपका मन और घूमने को करता रहेगा।

यहाँ शहर की गलियों में घूमते हुए एक दिन अनायास ही मुझे वाइन स्ट्रीट पर दूर से एक मूर्ति दिखी। जिज्ञासा-वश सड़क पार करके इस वक्ष मूर्ति के समक्ष पहुँचा तो शरीर में सिहरन सी दौड़ गई। मेरे सामने गुरुदेव रबीन्द्र नाथ टैगोर की एक अद्भुत प्रतिमा थी जिसके नीचे के विवरण में उनकी एक कविता की एक पंक्ति अंकित थी जिसका हिन्दी अनुवाद कुछ इस तरह है:

‘जब इस धरती पर पहली कली खिली तभी प्रकृति ने एक अजन्मे गीत को आमंत्रण दिया।’

‘फायरफ़्लाईज़, 192”



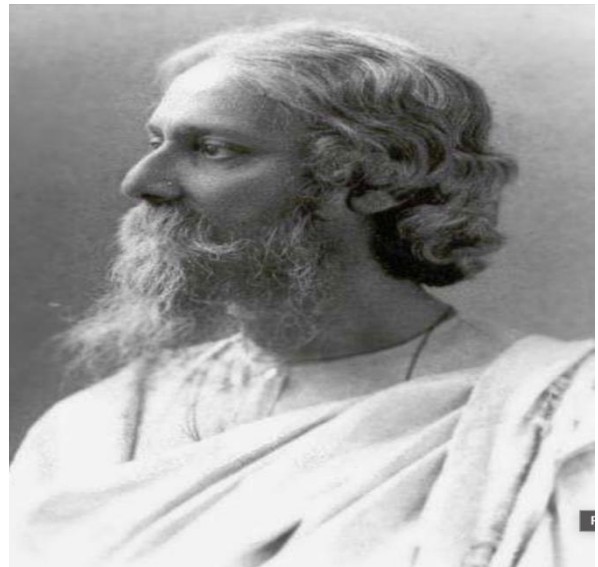
इसके बाद मेरी यात्रा एक तीर्थ में बदल गई क्योंकि भारत से हजारों मील दूर स्लाइगो की वाइन स्ट्रीट में लगी यह मूर्ति भारत और आयरलैंड जैसे दो प्राचीन देशों और दो नोबेल पुरस्कृत साहित्यकारों के साहित्यिक संबंधों की साक्षी है। पहले साहित्यकार गुरुदेव टैगोर थे जिन्हें 1912 में साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला और दूसरे साहित्यकार स्लाइगो के अपने आयरिश मूल के महाकवि विलियम बटलर येट्स थे, जिन्होंने इस शहर में अपने बचपन के कई महत्वपूर्ण वर्ष बिताए। उनका पैतृक घर भी पास ही है। एक ओर टैगोर की प्रतिमा है और सड़क की दूसरी ओर दीवार पर एक सुंदर चित्र के नीचे येट्स की कविता की कुछ पंक्तियाँ लिखी हैं। येट्स ने आयरलैंड को अपनी कविता में एक युवा स्त्री के रूप में चित्रित किया है। यहाँ इन दोनों साहित्यकारों का इतने नज़दीक होना एक संयोग नहीं बल्कि उन्हें श्रद्धांजलि देने का सुंदर प्रयास है।

इस साहित्यिक संयोग को समझने के लिए हमें पीछे चलना पड़ेगा, कुछ दिन, कुछ महीने नहीं, परंतु पिछली सदी में जब भारत और आयरलैंड दोनों उपनिवेशवाद की बंधन में छटपटा रहे थे। दोनों देशों में होम रूल यानी स्वराज्य के स्वर मुखर हो रहे थे। महात्मा गांधी और एनी बेसेंट, जो की मूलतः आयरिश थी, भारत में अंग्रेजों से स्वराज्य माँग रहे थे तो वहीं आयरलैंड में जॉन रेडमंड, ईमन डे वलेरा, आर्थर ग्रिफ़िथ भी अंग्रेजों से आज़ादी की गुहार लगा रहे थे। इन दोनों आंदोलनों में साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं से सक्रिय भूमिका निभाई। जहाँ भारत में गुरुदेव टैगोर ने अपनी कविताओं में एक स्वतंत्र देश की परिकल्पना दी वहीं येट्स ने अपनी कविताओं में आयरलैंड के गौरवशाली इतिहास को उकेरा। उन्होंने आयरिश पौराणिक

कथाओं और लोककथाओं से प्रेरणा लेते हुए कवितायें और नाटक लिखे। उनकी रचनाओं ने आयरिश संस्कृति और इतिहास में गर्व की भावना को जगाया और आयरिश राष्ट्रीय पहचान को मजबूत किया। वो जॉन रेडमंड के नेतृत्व में बनी उस आयरिश पार्टी के सक्रिय सदस्य भी रहे, जो ब्रिटिश संसद के माध्यम से होम रूल लाने का प्रयास कर रही थी। येट्स ने पार्टी के लिए भाषण दिए, लेख लिखे और फण्ड भी जुटाये। उन्होंने आयरिश स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाले कई लोगों के साथ व्यक्तिगत संबंध बनाए, जिनमें आर्थर ग्रिफिथ और ईमन डे वलेरा शामिल थे।

औपनिवेशिक यूरोप की इस पृष्ठभूमि में 51 वर्ष की आयु में बंगाली के एक प्रतिष्ठित कवि रवींद्रनाथ अपनी कुछ कविताओं के अंग्रेज़ी अनुवाद लेकर लंदन पहुँचे। यह उनकी पहली लंदन यात्रा नहीं थी। उनकी पारंपरिक शिक्षा इंग्लैंड के ईस्ट ससेक्स के समुद्री शहर ब्राइटन में एक पब्लिक स्कूल में शुरू हुई। उन्हें स्कूली शिक्षा में ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी और बाद में उन्होंने लंदन के यूनिवर्सिटी कॉलेज में भी कानून सीखने के लिए दाखिला लिया, लेकिन उन्होंने इसे छोड़ दिया। उन्होंने शेक्सपियर को पढ़ा और उनका साहित्य आत्मसात् किया। उन्होंने अंग्रेज़ी, आयरिश और स्कॉटिश साहित्य और संगीत का सार भी समझा और फिर वह भारत लौट गये।

यह धारणा भी गलत है कि रवींद्रनाथ टैगोर की खोज किसी तरह 1912 की उनकी यात्रा में हुई थी। वास्तव में टैगोर परिवार कई पीढ़ियों तक लंदन की ब्रिटिश सत्ता के समीप रहा। टैगोर के दादा, द्वारकानाथ लंदन के बड़े परिवारों में एक संभ्रांत व्यक्ति के रूप में जाने जाते थे। वर्ष 1846 में लंदन की अपनी यात्रा के दौरान में वो उस समय के प्रसिद्ध लेखकों डिकेंस, थैकरे और अन्य महत्वपूर्ण साहित्यकारों से मिले थे। चार्ल्स डिकेंस ने द्वारकानाथ को 'ओरिएंटल क्रिसस' और 'प्रिंस' की उपाधि दी थी। द्वारकानाथ को रानी विक्टोरिया और प्रिंस अल्बर्ट के साथ डिनर का सम्मान भी मिला था। ब्रिटिश राजघरानों के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता थी। द्वारकानाथ जी का निधन भी लंदन में ही हुआ।



इसके सात दशकों बाद 1912 की गर्मियों में द्वारकानाथ जी का साहित्यकार पौत्र अपनी कुछ रचनाओं के अंग्रेज़ी अनुवाद, जो उन्होंने स्वयं किए थे, लेकर इंग्लैंड आया था। 27 जून 1912 को लंदन में उनके सम्मान में एक 'कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसे टैगोर इवनिंग' यानी 'एक शाम टैगोर के नाम' के नाम से जाना गया। ये उनके लंदन के मेजबान विलियम रॉथेंस्टीन के शानदार घर में आयोजित की गई थी। इस भोज में लंदन के सभी विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार आये जो टैगोर को सुनना चाहते थे और उनमें से कई टैगोर परिवार से पहले से परिचित थे।

यहाँ पर उनकी मुलाक़ात उनसे चार साल छोटे आयरिश मूल के कवि विलियम बटलर येट्स से हुई। वहाँ पर उपस्थित लंदन के संभ्रांत समाज के किसी भी सदस्य को शायद ही इस बात का भान हुआ हो कि लंदन की इस डिनर पार्टी से शुरू हुई उनकी साहित्यिक मित्रता न केवल अनुवादों, लेखन सहयोग, व्याख्यानों और यहां तक कि रंगमंच के निर्माणों को जन्म देगी, बल्कि साहित्य में दो नोबेल पुरस्कारों की ओर भी ले जाएगी। पहला 1913 में टैगोर को दिया गया और दूसरा उसके एक दशक बाद 1923 में येट्स को। लंदन की इस एक शाम की एक सदी के पश्चात् आज भी टैगोर दक्षिण एशियाई साहित्य में, ना सिर्फ़ भारत बल्कि बांग्लादेश में भी साहित्य के सर्वोच्च मानक बने हुए हैं। भारत और बांग्लादेश दोनों के राष्ट्रगान टैगोर की ही कलम से निकले हैं। वहीं येट्स स्वतंत्र आयरलैंड की पहली सीनेट में सीनेटर बनाये गये। आज पूरे आयरलैंड में उनके स्मारक हैं, संग्रहालय हैं और उन्हें स्वच्छंद आयरिश जिजीविषा के सशक्त बिंब के रूप में देखा जाता है। उन्हें राष्ट्र कवि जैसा ही प्राप्त है। आज भी वो दुनिया भर में अंग्रेज़ी के सर्वश्रेष्ठ कवियों में गिने जाते हैं।

येट्स ने 1913 में टैगोर के कविता संग्रह 'गीतांजलि' के लिए भूमिका भी लिखी, जिसे लंदन की इंडिया सोसाइटी ने प्रकाशित किया। इस भूमिका का आधार उन अनुवादों पर था जो टैगोर ने अपने लंदन के मेजबान विलियम रॉथेंस्टीन को दिए थे और येट्स ने और बेहतर बनाने में बहुत मदद की। टैगोर को मुख्य रूप से इसी रचना के लिए 1913 में नोबेल पुरस्कार दिया गया। अगर यह कहा जाये कि येट्स ने टैगोर और भारत को पहला नोबेल पुरस्कार दिलाया तो अतिशयोक्ति ना होगी। भारत के प्रति येट्स की रुचि टैगोर से लंदन में मिलने से पहले से थी, जैसा कि 1889 के उनके संग्रह 'क्रॉसवेज़' में भारतीय-थीम वाली कविताओं में स्पष्ट दिखता है। काफी हद तक, यह रुचि येट्स के प्राचीन आयरलैंड के रोमांटिक विचार पर आधारित थी, जिसे वे भारत के प्राचीन सभ्यता के समकक्ष मानते थे।

येट्स का मानना था कि भारतीय संस्कृति आयरिश लोगों के लिए एक आकर्षक और प्रेरणादायक विषय है। शायद इसीलिए येट्स टैगोर की कविताओं से बहुत ज़्यादा प्रभावित हुए। गीतांजलि की भूमिका में येट्स ने लिखा है: "मैं इन अनुवादों की पांडुलिपि को कई दिनों तक अपने साथ लेकर घूमता रहा हूँ, इसे रेलगाड़ियों में, बसों में और रेस्तरां में पढ़ता रहा हूँ, और दूसरों के आसपास मुझे अक्सर इसे छिपाना पड़ा है ताकि कोई अजनबी ये न देख ले कि इन पंक्तियों का मुझ पर कितना गहरा असर होता है।" येट्स ने टैगोर के एक प्रसिद्ध नाटक 'डाक घर' का मंचन डबलिन के ऐबी थिएटर में कराया। दोनों रचनाकारों की सैंतीस सालों की मित्रता उनको जीवन पर्यंत प्रभावित करती रही।

टैगोर ने येट्स के सामने पूर्व की सूझबूझ और ईमानदारी को प्रस्तुत किया, जिससे एशियाई दर्शन में येट्स के विश्वास को संबल मिला। टैगोर ने येट्स को पश्चिम की कलात्मक अंतरात्मा के प्रतीक के रूप में देखा। इस रिश्ते ने कई उतार चढ़ाव भी देखे। टैगोर- येट्स का संबंध भारत-आयरलैंड के संबंधों का प्रतीक भी है। प्राचीन सभ्यता वाले दो देश जो सदियों की गुलामी के बाद अपने गौरवशाली इतिहास और भाषा को प्रतीक बनाकर स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे उन्हें इन दोनों साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से एक बौद्धिक नेतृत्व देने का महत्वपूर्ण कार्य किया। टैगोर कभी आयरलैंड नहीं गये लेकिन उनकी रचनाएँ वहाँ ना सिर्फ पहुँची बल्कि उन्होंने सदियों से गुलाम आयरलैंड की घायल आत्मा को स्पर्श किया। इन रचनाओं को विश्व में पहुँचाने का काम येट्स ने निःस्वार्थ मन से किया। ऐसी निश्छल साहित्यिक मित्रता का उदाहरण इतिहास में विरले ही मिलता है।

येट्स ने 1939 में 73 की आयु में फ्रांस में अंतिम साँसे ली तो इसके दो साल बाद सन् 1941 में गुरुदेव ने कलकत्ता में दुनिया को अलविदा कहा। इस अनमोल मित्रता को सम्मान देने के लिए ही टैगोर की मूर्ति येट्स के पैत्रिक शहर स्लाइगो में लगायी गई है। इस मित्रता को इससे अच्छी श्रद्धांजलि नहीं दी जा सकती थी। येट्स की समाधि पर एक पंक्ति अंकित है जो उनकी कविता 'अंडर बेन बुलबेन' से ली गई है।

"निर्लिप्त रहो जीवन से, मृत्यु से - सब त्याग कर आगे बढ़ो।"

-अभिषेक त्रिपाठी
बेलफ़ास्ट, आयरलैंड